Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

लोक संस्कृति का स्वरूप और लोक सांस्कृतिक अध्ययन: एक दृष्टि

डॉ. सुनीता चौहान

स्वतंत्र शोधकर्ता

शोध सार

किसी भी देश की जलवायु और प्राकृतिक सम्पदा उस देश के रहने वाले व्यक्तियों के खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार, चिन्तन-मनन और साहित्य को प्रभावित करती है। जिस प्रकार किसी साहित्यकार का साहित्य उसके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता, उसी प्रकार साहित्यकार भी अपने चारों ओर के वातावरण के प्रभाव से अछूता नहीं रह सकता दूसरे शब्दों में यदि सीधे कहा जाए तो यह कह सकते है कि किसी भी देश का साहित्य उस देश की संस्कृति से अनुप्राणित होता है। यहाँ पर लोक संस्कृति, उसके स्वरूप, उसके क्षेत्र और उसकी उपादेयता पर संक्षेप में विचार अपेक्षित है। 'संस्कृति' का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। वास्तव में साहित्य, संगीत, कला, धर्म, दर्शन, लोक-वार्ता, राजनीति आदि का समावेश संस्कृति में होता है। इसके दो पक्ष कहे गए हैं। पहला रहन-सहन आचार-विचार, संस्कार सम्पर्क आदि और दूसरा परम्परा से सम्बन्धित है। इस प्रकार पहले पक्ष में प्राकृतिक वातावरण, पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक आदि स्थितियों का तथा दूसरे में परम्परा से प्राप्त विश्वास, मान्यताओं और पर्वोत्सव आदि का प्रभाव समाहित है।

प्रमुख शब्द: *लोक संस्कृति, सांस्कृतिक अध्ययन, आचार-विचार, रहन-सहन, लोक-विश्वास, रीति-रिवाज, खान-पान, संस्कार, प्रथाएं, प्राकृतिक वातावरण आदि।*

लोक संस्कृति का स्वरूप और लोक सांस्कृतिक अध्ययन: एक दृष्टि

किसी भी देश की जलवायु और प्राकृतिक सम्पदा उस देश के रहने वाले व्यक्तियों के खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार, चिन्तन-मनन और साहित्य को प्रभावित करती है। जिस प्रकार किसी साहित्यकार का साहित्य उसके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता, उसी प्रकार साहित्यकार भी अपने चारों ओर के वातावरण के प्रभाव से अछूता नहीं रह सकता दूसरे शब्दों में यदि सीधे कहा जाए तो यह कह सकते है कि

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

किसी भी देश का साहित्य उस देश की संस्कृति से अनुप्राणित होता है। यहाँ पर संस्कृति, उसके स्वरूप, उसके क्षेत्र और उसकी उपादेयता पर संक्षेप में विचार अपेक्षित है।

संस्कृति पर विचार करते हुए विद्वानों ने इसे मनुष्य के भूत, वर्तमान और भविष्य के सर्वांग पूर्ण प्रकार, जिन्दगी का तरीका, किसी देश के जन-साधारण का व्यक्तित्व निष्पन्न करने वाली प्रक्रिया, आध्यात्मिक और आधिभौतिक शक्तियों को सामाजिक जीवन के लिए उपयोगी तथा अनुकूल बनाने की क्रिया, किसी जाति अथवा राष्ट्र के शिष्ट पुरुषों के विचार, वाणी एवं क्रिया के रूप, जातीय संस्कार वर्तमान एवं पुरातन अनुभूतियों के संस्कारों के अनुरूप समुदाय का दृष्टिकोण आदि रूपों में निदर्शित किया है।1 संस्कृति की व्यापक भाव-भूमि को स्वीकार करते हुए डॉ. जितेन्द्र नाथ पाण्डेय ने यह स्वीकार किया है कि 'संस्कृति उन सभी भूषण भूत सम्यक् कृतियों या चेष्टाओं की समष्टि है, जिसके द्वारा मानव का ऐहिक एवं आमुष्मिक अभ्युदय सम्भव है।2 कतिपय विद्वान संस्कृति और सभ्यता को संस्कृति का पर्याय मानते है, किन्तु यह मान्यता भ्रान्तिपूर्ण है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सभ्यता को समाज की बाह्य व्यवस्था का नाम तथा संस्कृति को व्यक्ति के अन्दर के विकास की संज्ञा दी है। उनके शब्दों में, 'सभ्यता का आन्तरिक प्रभाव संस्कृति है। सभ्यता समाज की बाह्य-व्यवस्थाओं का नाम है, संस्कृति व्यक्ति के अन्दर के विकास का।'3 संस्कृति' का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। वास्तव में साहित्य, संगीत, कला, धर्म, दर्शन, लोक-वार्ता, राजनीति आदि का समावेश संस्कृति में होता है। इसके दो पक्ष कहे गए हैं। पहला रहन-सहन आचार-विचार, संस्कार सम्पर्क आदि और दूसरा परम्परा से सम्बन्धित है। इस प्रकार पहले पक्ष में प्राकृतिक वातावरण, पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक आदि स्थितियों का तथा दूसरे में परम्परा से प्राप्त विश्वास, मान्यताओं और पर्वोत्सव आदि का प्रभाव समाहित है।

'संस्कृति' देश-सापेक्ष है। अतः किसी भी देश के वातावरण का प्रभाव उस देश के निवासियों पर पड़ता है। इस प्रकार भारत से सम्बन्ध रखने वाली संस्कृति 'भारतीय संस्कृति' है। इसका रूप सामाजिक है। भारतीय संस्कृति में समन्वय की प्रवृत्ति होने के कारण यह न तो पूर्णतया आर्यो की है, न ही द्रविड़ों की, वरन् यह अनेक उन जातियों के अंशदान का सम्मिश्रण है, जिनका समय-समय पर भारत में आगम हुआ। डॉ0 मंगलदेव शास्त्री ने आर्यों और अनार्यों की समन्वित संस्कृति को भारतीय संस्कृति के मेरुदण्ड की संज्ञा दी है। उनके शब्दों में 'आर्य और अनार्य संस्कृतियों का उक्त अति प्राचीन समन्वय ही 'भारतीय-संस्कृति' के मेरुदण्ड के समान है।'4 समन्वय की इसी प्रवृत्ति ने भारतीय संस्कृति को अखण्ड बनाए रखा। नहीं तो विश्व की अन्य प्राचीनतम संस्कृतियाँ या तो परिवर्तित हो गयी या फिर सदैव के लिए नष्ट हो गई। भारतीय-संस्कृति

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

में इस मूर्धन्य विशेषता के अतिरिक्त आध्यात्मिकता, पुनर्जन्म में विश्वास, वर्णाश्रम-व्यवस्था, समन्वय, प्रकृति-प्रेम, विश्व-बन्धुत्व, सनातनता आदि अनेक विशेषताएं है।

'लोक-संस्कृति' वस्तुतः इसी संस्कृति का ही एक रूप है। इस 'लोक-संस्कृति' के स्वरूप को ज्ञात करने के लिए पहले 'लोक' शब्द को समझना आवश्यक है। 'लोक' शब्द संस्कृत के 'लोक दर्शने' धातु में 'ध ् ´' प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है।5 इस धातु का अर्थ देखना है, जिसका लट् लकार के अन्य पुरुष के एक वचन का रूप 'लोकते' है। अतः लोक शब्द का अर्थ हुआ देखने वाला। इस प्रकार उस समस्त जन-समुदाय को, जो इस कार्य को करता है, उसे 'लोक' कहा जा सकता है। इस शब्द से ही हिन्दी के लोग शब्द की व्युत्पत्ति मानी जाती है, जिसका अर्थ है सर्वसाधारण, जनता।

'लोक' शब्द अत्यन्त प्राचीन है और सामान्य जनता के अर्थ में इसका प्रयोग चिरकाल से चला आ रहा है।6 ऋग्वेद में भी साधारण जनता के अर्थ में इस शब्द का उल्लेख मिलता है। इस वेद में लोक के स्थान पर 'जन' शब्द का प्रयोग मिलता है। वैदिक ऋषि कहता है कि विश्वामित्र के द्वारा उच्चरित यह मंत्र भारत 'जन' की रक्षा करता है।7 ऋग्वेद के सुप्रसिद्ध 'पुरुष सूक्त' में 'लोक' शब्द का व्यवहार जीव तथा स्थान दोनो अर्थों में हुआ है।

'नाभ्या आसीदन्तरिक्षं

शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।

पद्भ्यां भूमिः दिशः श्रोत्रात्,

तथा लोकानकल्पयत्।।8

महाभाष्कार पतंजलि ने 'लोक' शब्द का प्रयोग जनसाधारण के अर्थ में किया है।9 संस्कृत व्याकरण के जनक महर्षि पाणिनि ने अपनी कृति 'अष्टाध्यायी' में 'लोक' तथा 'सर्वलोक' शब्दों का उल्लेख किया है और इसमें 'ठ' प्रत्यय लगाने पर लौकिक तथा सार्वलौकिक शब्दों की निष्पत्ति की है।10 ऐतरेयोपनिषद में परमेश्वर द्वारा समस्त लोकों के सृजन का उल्लेख है तथा यहाँ 'लोक' शब्द का प्रयोग 'भुवन' के अर्थ में करते हुए अनेक लोकों की कल्पना की गई है।11 इसी प्रकार 'महाभारत' में वर्णित विषयों की चर्चा करते हुए लोक यात्रा का उल्लेख किया गया है।

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

'पुराणानां चैव द्विव्यानां,

कल्पानां युद्ध कौशलम्।

वाक्य जाति विशेषाश्च,

लोक यात्रा क्रमश्च यः।।12

'भगवद्गीता' में 'लोक' तथा 'लोक संग्रह' आदि शब्दों का प्रयोग अनेक स्थानों पर प्राप्त होता है। 'गीता' में 'लोक-संग्रह' पर बड़ा बल दिया गया है।

'कर्मणैव हिंससिद्धिमास्थिताः जनकादयः।

लोक संग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि।।13

बौद्ध धर्म के विकास के साथ-साथ जब मानव भावना का महत्त्व बढ़ा तो 'लोक' शब्द मानवीय उत्कृष्टताओं का बोधक बन गया। प्राकृत एवं अपभ्रंश में प्रयुक्त लोकजता (लोकयात्रा) एवं लोकघवाय (लोक प्रवाद) शब्द भी लौकिक आचारों का महत्त्व प्रकट करने लगे।14 आगे चलकर सन्त कवियों ने विश्व को तीन लोको स्वर्ग, पृथ्वी एवं पाताल में विभक्त कर दिया।15 कामणि काली नागणी तीन्यू लोक मझाँरि कहकर कबीर ने इसकी पुष्टि की है।16 डॉ0 सर्वेश कुलश्रेष्ठ ने ठीक ही कहा है- ''अर्वाचीन में मानव के लिए लोक सर्वोच्च प्रजापति है। लोक और लोक धात्री, सर्वभूतरता पृथ्वी और लोक का व्यक्त रूप मानव, यही हमारे नए जीवन का अध्यात्म शास्त्र है। इसका कल्याण हमारी मुक्ति का द्वार और निर्माण का नवीन रूप है। लोक पृथ्वी और मानव इसी त्रिलोकी में जीवन का कल्याणतम रूप है।''17

हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'लोक' की चर्चा करते हुए कहा है- 'लोक शब्द का अर्थ 'जनपद' या 'ग्राम्य' नहीं है, बल्कि नगरों और गाँवों में फैली हुई वह समस्त जनता है, जिनके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं। ये लोग नगर में परिष्कृत रुचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल तथा अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती हैं उन्हें उत्पन्न करते हैं।''18 डॉ0 जितेन्द्र नाथ पाण्डेय ने तो 'लोक' शब्द को मुख्यतया दो अर्थो में लेते हुए कहा है- ''यह 'लोक' शब्द नाना अर्थों को अभिव्यंजित करता है, किन्तु मुख्यतया इसके दो अर्थ हैं। एक तो स्थान जिसके सन्दर्भ में

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

इहलोक, परलोक, त्रिलोक, दिव्यलोक आदि की बात कही जाती है और दूसरा इसका अर्थ है, सामान्य जन-समुदाय।''19 इससे स्पष्ट है कि जो लोग अपनी पुरातन स्थिति में स्थिर रहते हुए सुसंस्कृत और बुद्धिजीवी वर्ग के प्रभाव से परे रहते हैं उन्हें ही 'लोक' कहा जा सकता है।

मूलतः 'लोक' शब्द की उत्पत्ति एंग्लो सैक्शन शब्द 'फोक' से हुई है, जो जर्मनी में 'फोक' शब्द के रूप में प्रचलित है। विलियम टॉमस ने लोक शब्द का अर्थ असंस्कृत वर्ग से लिया जो विशिष्ट संस्कृति शासक वर्ग की विचारधारा तथा लिखित प्रमाण वाली जातियों से अप्रभावित था। ऐसे लोग किसी सभ्य राष्ट्र में मुख्यतः सामान्य कार्यकर्ता हुआ करते थे। उन्नीसवीं शताब्दी के दशक के नृतत्त्वशास्त्री ए0 सी0 हेडेन तथा डब्ल्यू0 आर0 रिसर्व ने सुदूरवर्ती तथा एकाकी आदिम जातियों को नृतत्त्वशास्त्र का केन्द्र बनाकर 'लोक' शब्द का सम्बन्ध आदिम जातियों से जोड़ दिया।

कालान्तर में नृतत्त्वशास्त्रियों ने देखा कि जीवन की प्रवृत्तियों में न्यूनाधिक भेद होते हुए भी ग्रामवासी और नगरवासी दोनों एक जैसे समुदायों में रहते हुए परस्पर सम्बन्ध बनाए हुए हैं। रॉवर्ट रेडफील्ड के अनुसार- 'यह स्थिति वस्तुतः एक ही मिली जुली सामाजिक संस्कृति के उच्चस्तरीय एवं निम्नस्तरीय दो धरातलों की द्योतक है, जो एक दूसरे को प्रभावित करते हैं।20 अतः वे ग्रामीण समुदाय को सभ्य समुदाय से अलग न मानकर विशाल मानव समाज के अंग रूप में ग्रहण करने लगे। बीसवीं शताब्दी के आरम्भिक दशकों में 'लोक' शब्द का अर्थ ग्रामीण जन-समुदाय अथवा कृषक वर्ग से लिया जाने लगा। ये वर्ग नगरवासियों की शिक्षा-दीक्षा उनके विधिवत् संस्कारों से दूर तो था ही उनकी तुलना में अधिक पिछड़ा भी था।

वस्तुतः 'लोक' शब्द से तात्पर्य उस जन-समूह से है, जिसमें नगर की सांस्कृतिक, आर्थिक और शिक्षामूलक विविधता कम परिलक्षित होती है, उनकी जीवन-गत विविधताएंरीति-नीतियाँ और वार्ताएं जिनमें गीत भी सम्मिलित हैं, सारे समूह में समान रूप से प्रचलित रहती है। उनकेलोकगीत नगरीय काव्य गीत एवं कलात्मक संगीत की अपेक्षा भिन्न होते हैं।

अब ग्रामीण एवं नागरिक क्षेत्रों के निवासियों में पूर्ण पार्थक्य किसी भी सभ्य समाज या संस्कृति में सम्भव नहीं है, दोनों ही स्थानों पर 'लोक' मनोवृत्तिवाले लोग विद्यमान रहते हैं, इसलिए विभिन्न मानव समूहों को एक सूत्र में देखने की प्रवृत्ति उभर रही है। जहाँ जहाँ 'लोक-समूह' विद्यमान रहेंगे। वहाँ उनकी संस्कृति अवश्य रहेगी फिर वो क्षेत्र चाहे ग्राम हो या नगर।

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

हिन्दी के प्रसिद्ध लोकवार्ता विद् डॉ0 सत्येन्द्र ने 'लोक' शब्द की व्याख्या करते हुए बतलाया है कि '' 'लोक' मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो अभिजात्य संस्कार शास्त्रीयता और पाण्डित्य की चेतना अथवा अहंकार से शून्य है और जो एक परम्परा के प्रवाह में जीवित रहता है।''21 बंगाल के शंकर सेनगुप्त ने लोक शब्द की व्याख्या करते हुए कहा है- ''किसी न किसी रूप में हम सभी लोग 'लोक' शब्द से सम्बोधित किए जा सकते हैं, क्योंकि हममें से कोई भी परम्परा विहीन तथा पूर्वजों के द्वारा छोड़े गए मौखिक ज्ञान से वंचित नहीं है। किन्तु इसमें से सभी लोग 'लोक' के सृजनशील प्रतिभाशाली सदस्य नहीं है। किसी लोक-समाज में जो लोग सर्जनात्मक प्रतिभा से सम्पन्न होते है, उन्हीं को हम 'लोक' कहते है। भारतीयों की यहीं लोक-मनोवृत्ति औषधियों के प्रयोग में तथा जादू टोने और लोकोपचारों पर उनके विश्वास के रूप में झलकती है। वे लोग लोक-देवी देवताओं पर अटूट विश्वास रखते है।''22

इस प्रकार हम देखते हैं कि लोक का सम्बन्ध न केवल ग्रामीण समुदाय से है, अपितु नगर में रहने वाली उस जनता से भी है, जिस पर अभिजात्य वर्ग का प्रभाव नहीं अथवा अत्यल्प है। संक्षेप में निष्कर्ष स्वरूप हम यह निःसन्देह कह सकते हैं, कि 'लोक' वह सरल, स्वाभाविक, आडम्बर एवं अहंकारहीन मानव समाज है, जो अपनी भावनाओं, विचारों, परम्पराओं, संस्कारों, क्रिया-कलाप, अभिव्यक्तियों एवं मान्यताओं में सामाजिक कल्याण के सभी तत्व समाहित किए हुए है। 'लोक' शब्द की व्याख्या के पश्चात् 'लोक-संस्कृति' पर विवेचना करना आवश्यक है। 'लोक-संस्कृति' के स्वरूप से सम्बन्धित विचार-परम्परा पर अपना मत व्यक्त करते हुए डॉ0 जितेन्द्रनाथ पाण्डेय ने उल्लेख किया है कि ''भारत में जब आर्य और अनार्य जातियों में संघर्ष हुआ तब दो प्रकार की संस्कृतियाँ जनमीं। आर्यों की संस्कृति वेद सम्मत थी और अनार्यों की संस्कृति वेदेतर। यही वेदेतर संस्कृति 'लोक-संस्कृति' कहलाई।23

इस प्रकार वेद सम्मत संस्कृति को हम शिष्ट संस्कृति और वेदेतर संस्कृति को लोक-संस्कृति इन दो भागों में बाँट सकते हैं। मानव के ज्ञान का आधार अत्यन्त विस्तृत है। एक ओर उसके ज्ञान का स्त्रोत वेद-पुराण हैं, तो दूसरी ओर वह आपसी सम्पर्क और निजी अनुभवों से ज्ञानार्जन करता है। 'लोक-संस्कृति' का सम्बन्ध इस दूसरी कोटि के ज्ञानार्जनकर्ताओं से है। ये लोग अपनी प्रेरणा 'लोक' से ग्रहण करते है, 'लोक-संस्कृति' की जन्मभूमि जनता है, न कि वेद-पुराण। यदि बौद्धिक विकास की दृष्टि से देखा जाए तो इस संस्कृति के अनुयायियों का बौद्धिक स्तर शिष्ट संस्कृति के लोगों की अपेक्षा कुछ निम्न स्तर का होता है। यदि हम ऋग्वेद और अथर्ववेद का अध्ययन करें तो यह पार्थक्य स्पष्ट होगा। संस्कृत के ख्याति प्राप्त विद्वान बलदेव उपाध्याय

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

ने इस विषय का गम्भीर विवेचन करते हुए अपना मत इस प्रकार प्रकट किया है- 'लोक-संस्कृति' शिष्ट संस्कृति की सहायक होती है। किसी देश के धार्मिक-विश्वासों, अनुष्ठानों तथा क्रिया-कलाप के पूर्ण परिचय के लिए दोनों संस्कृतियों में परस्पर सहयोग अपेक्षित रहता है। इस दृष्टि से अथर्ववेद ऋग्वेद का पूरक है। ये दोनों संहिताएं दो विभिन्न संस्कृतियों के स्वरूप की परिचारिकाएं हैं। यदि अथर्ववेद लोक-संस्कृति का परिचायक है, तो ऋग्वेद शिष्ट संस्कृति का दर्पण है। अथर्ववेद के विचारों का धरातल सामान्य जन-जीवन है, तो ऋग्वेद का विशिष्ट जन-जीवन है।''24 ऋग्वेद में जहाँ एक ओर यज्ञ आदि का विधान है, तो अथर्ववेद में अंधविश्वास, टोना टोटका, जादू मंत्र आदि का वर्णन है। इस प्रकार लोके वेदे च सूत्र2 अपने को सार्थक करता हुआ ऋग्वेद को शिष्ट संस्कृति का ग्रन्थ और अथर्ववेद को लोक-संस्कृति का ग्रन्थ सिद्ध करता है। इस प्रकार ये दोनों ग्रन्थ दो विभिन्न संस्कृतियों के प्रतीक हैं।25

उपनिषद काल में भी ये दोनों संस्कृतियाँ पृथक रूप में दृष्टिगोचर होती है। वृहदारण्यक, कठोपनिषद में जहाँ आत्मा-परमात्मा, जीव और जगत का वर्णन है, वे अभिजात संस्कृति के ग्रन्थ है वहीं यदि हम गृह्य सूत्रों को लोक-संस्कृति का विश्व-कोष कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी।26 यदि हम रामायण काल में प्रवेश करें तो उस समय भी सर्वसाधारण और सुसंस्कृत लोगों की भाषा में भेद था। जब हनुमान लंका में अशोक वाटिका में बैठी सीता से मिलने जाते हैं, तब वे सोंचते हैं कि यदि मैं शिष्ट लोगों की भाषा का प्रयोग करुँगा तो सीता मुझे रावण समझकर डर जायेंगी।27

संस्कृत के नाटकों में श्रेष्ठ पात्रों के लिए संस्कृत भाषा और चेरी, दासी आदि पात्रों के लिए प्राकृत भाषा का प्रयोग किया गया जो कि 'लोक-संस्कृति' का एक अंग थी।28 महाकवि कालिदास ने जहाँ एक ओर ''वापी चास्मिन मरकत शिलाबद्ध सोपान मार्गा''29 लिखकर उच्चवर्ग के वैभव का वर्णन किया है, वही दूसरी ओर ईख के खेत की छाया में बैठकर धान के खेत की रक्षा करने वाली स्त्रियों का भी वर्णन किया है।30 महाकवि कालिदास ने 'कुमार सम्भव' में भी लिखा है कि शिव और पार्वती के विवाह में सरस्वती ने संस्कृत और लोक-भाषा में वर-वधू की प्रशंसा की है।31

आजकल लोक-संस्कृति को अंग्रेजी शब्द फोकलोर का पर्याय कहा जाने लगा है। सन् 1960 में डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने 'लोकवार्ता' के एक सम्भावित पर्याय के रूप में 'लोक-संस्कृति' शब्द का प्रयोग सुझाया है। उनके अनुसार- ''लोक-संस्कृति' शब्द का प्रयोग इसलिए समीचीन है कि 'लोक-संस्कृति' के अन्तर्गत जन-

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

जीवन से सम्बन्धित जितने आचार-विचार, विधि-निषेध, विश्वास, प्रथा, परम्परा, धर्म, मूढ़ाग्रह, अनुष्ठान आदि हैं, वे सभी आते हैं।

वे यह भी कहते है कि 'लोक-संस्कृति' चिरपरिचित शब्द है। इसके उच्चारण मात्र से ही जन-जीवन का चित्र, उसकी संस्कृति की झाँकी हमारी आँखों के सामने उपस्थित हो जाती है। यह शब्द पहले से ही विद्यमान है, तो लोकवार्ता, लोकयान जैसे अप्रचलित शब्दों का प्रचार कहाँ तक संगत है।32 इस प्रकार हम देखते हैं कि 'लोक-संस्कृति' के लिए 'लोकवार्ता' और लोकयान जैसे शब्द भी प्रयुक्त होते हैं। इन्हें एक प्रकार से 'लोक-संस्कृति' का पर्याय ही मान सकते है।

लोक-साहित्य के मर्मज्ञ डॉ0 सत्येन्द्र ने भी लोकवार्ता को लोक-संस्कृति का पर्यायवाची शब्द मानते हुए लिखा है- ''लोकवार्ता शब्द विशद अर्थ रखता है। इसके अन्तर्गत वह समस्त आचार-विचार की सम्पत्ति आ जाती है, जिसमें मानव का परम्परित रूप प्रत्यक्ष हो उठता है और जिसमें परिमार्जन अथवा संस्कार की चेतना काम नहीं करती। लौकिक, धार्मिक-विश्वास, धर्म-गाथाएं तथा कथाएं, लौकिक गाथाएं तथा कथाएं, कहावत, पहेलियाँ आदि सभी लोकवार्ता के अंग है।33 'लोक-संस्कृति' पर अपने विचार व्यक्त करते हुए डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय ने कहा है- ''इसका क्षेत्र विस्तार अत्यन्त अधिक है। इसके अन्तर्गत पिछड़ी हुई जातियों में प्रचलित अथवा अपेक्षाकृत समुन्नत जातियों के असंस्कृत समुदायों के अवशिष्ट लोक-विश्वास, रीति-रिवाज, खान-पान, संस्कार, प्रथाएं, रहन-सहन एवं आचार-विचार आते हैं। प्रकृति के चेतन तथा जड़ जगत के सम्बन्ध में भूत-प्रेतों की दुनियाँ तथा उसके साथ मनुष्यों के सम्बन्धों के विषय में जादू टोना, सम्मोहन, वशीकरण, ताबीज, भाग्य, शगुन, रोग तथा मृत्यु के सम्बन्ध में आदिम तथा असभ्य जातियों की अन्ध-परम्पराएं इसके भीतर समाविष्ट होती हैं। इसके साथ ही विवाह, उत्तराधिकार, बाल तथा प्रौढ़ जीवन के रीति-रिवाज, अनुष्ठान और त्योहार, युद्ध, आखेट, पशुपालन, मत्यस्य-व्यवसाय आदि विषयों के विधि-विधान इसके अन्तर्गत है।34 संक्षेप में लोक की मानसिक सम्पन्नता में आने वाली प्रत्येक वस्तु 'लोक-संस्कृति' के क्षेत्र के अन्तर्गत है। वस्तुतः 'लोक-संस्कृति' मानव-जीवन के समस्त अंगों से सम्बन्धित होने के साथ ही साथ उसके साहित्य को भी अपने में आत्मसात किए हुए है। 'लोक-संस्कृति' को यदि हम वृक्ष की उपमा दें तो 'लोक-साहित्य' उसकी एक शाखा के समान है।

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

श्री रामनाथ सुमन ने लोक-संस्कृति की सहजता एवं व्यापकता की ओर संकेत करते हुए लिखा है कि- ‘‘जब साहित्य राज-प्रासादों के विलास कक्षों में बन्द हो गया, तब प्रणय का पावनकारी मुक्तिवाद ग्राम-वधूटियों एवं ग्राम तरुणों के कण्ठों में अमराइयों के बीच फूटा, तब साहित्य की सरस्वती सहस्त्रधार होकर लोक-कण्ठ पर सारंगित हुई, तब संस्कृति अतर्क्य विश्वासों एवं प्रेरणाओं का आधार लेकर मीरा की भक्ति के चरणों में ‘घुँघरू बन गई, तब वह लक्ष लक्ष ग्राम निवासों की दिवारों पर शिल्प बनकर उभरी, तब उसने सहस्त्रशः शिलाओं को जीवित अहिल्या का रूप दिया, संगीत और वाद्य उसकी झंकार से मुखरित हो गएंे। जीवन अगणित तरंगो से मुखरित हो गएं। जीव अगणित तरंगों में बहा अगणित वाद्यों में बजा और अगणित गीतों में फूट पड़ा। यही सब समष्टिगत आत्म प्रकाश ‘लोक-संस्कृति’ है।’’35 ‘लोक-संस्कृति’ अन्तः सलिला सरस्वती की भाँति जन-जीवन में सतत् प्रवाहित हुआ करती है।36 इसलिए डॉ0 रामानन्द तिवारी ने ‘लोक-संस्कृति’ को संस्कृति का लोकप्रिय और जीवंत रूप कहा है।37 डॉ0 गुणपाल सांगवान के शब्दों में- ‘‘लोक-संस्कृति’ से आन्तरिक जीवन का परिष्कार एवं विकास होता है। फलस्वरूप मनुष्य में आन्तरिक गुणों का संचार होता है, जिससे वह चरम-लक्ष्य की ओर अग्रसर होकर नर से नारायण बन सके। यह जीवन से अलग नहीं बल्कि वैसे ही है जैसे- दूध में मक्खन या फूलों में सुगन्ध।38

इस प्रकार हम देखते है कि वैदिक काल से आज तक ‘लोक-संस्कृति’ की एक स्वतन्त्र धारा प्रवाहित होती दिखाई पड़ती है। वास्तव में ‘लोक-संस्कृति’ में प्राकृत मानव के रीति-रिवाज, लोक-विश्वास, खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार, लोक-मान्यताएं आदि अन्तर्निहित है, जिनको वह मौखिक रूप से परम्परा रूप में यथावत् या अत्यल्प परिवर्तन के साथ ग्रहण करता है।

जहाँ तक लोक सांस्कृतिक अध्ययन का तात्पर्य है उससे पहले डॉ0 जितेन्द्र नाथ पाण्डेय के विचार उद्धृत करना आवश्यक है। उन्होंने ‘तुलसीकाव्य का सांस्कृतिक अध्ययन’ में सांस्कृतिक अध्ययन से तात्पर्य के विषय में कहा है- ‘‘साहित्य अथवा काव्य के किसी अंग को लेकर संस्कृति के विभिन्न पक्षों पर सम्मिलित रूप से चिन्तन, उसका सांस्कृतिक अध्ययन है। काव्य विशेष के सांस्कृतिक अध्ययन से उस काव्य के रचनाकालीन समाज की स्थिति का दो दृष्टिकोणों से अध्ययन हो जाता है। एक तो उसकी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक और कलात्मक स्थितियों का और दूसरे संस्कारों और आदर्शों का जो जाति विशेष के लौकिक जीवन का परिचालन करते हैं। पहले दृष्टिकोण का सम्बन्ध इतिहास से है दूसरे

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

का परम्परा से। काव्य का सम्बन्ध उसकी सम-सामयिक परिस्थितियों की चर्चा के साथ परम्पराओं, मान्यताओं और आदर्शों के निदर्शन से भी है। कवि अथवा लेखक अपने काव्य में जहाँ तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक आदि परिस्थितियों का निरूपण करता है, वही 'सत्यम्' के साथ 'शिवम्' की चर्चा भी उसके लिए अनिवार्य है।39

निष्कर्षतः इस सिद्धान्त के आधार पर हम 'लोक-संस्कृति' का अध्ययन करें तो इसके अन्तर्गत लोक-विश्वास, रीति-रिवाज, खान-पान, संस्कार, प्रथाएं, रहन-सहन, विचार, परम्पराएं, क्रिया-कलाप, मान्यताएं, युद्ध, त्योहार, व्यवसाय, आचार-विचार एवं मानव जीवन के समस्त अंगों से सम्बन्धित सभी वस्तुओं का अध्ययन किया जाता है।

संदर्भ सूची

1. तुलसीकाव्य का सांस्कृतिक अध्ययन, डॉ0 जितेन्द्र नाथ पाण्डेय, पृ0-18

2. वही, पृ0-19

3. विचार और वितर्क, डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ0-181

4. भारतीय संस्कृति का विकास (वैदिक-धारा), मंगलदेव शास्त्री, पृ0-13

5. सिद्धान्त-कौमुदी, पृ0-417

6. लोक शब्द की प्राचीनता के विवरण के लिए देखिए-

लोक-साहित्य की भूमिका, डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, पृ0 10-13

7. य इमे रोदसी उभे, अहमिन्द्रमतुष्टवम्।

विश्वामित्रस्य रक्षति, ब्रह्मेदं भारतजनम्। ऋग्वेद- 3/43/12

8. ऋग्वेद (पुरुष सूक्त)- 10/90/24

9. अभ्यन्तरोऽहं लोके न त्वहं लोकः, आहिन्क महाभाष्य, पृ0-20

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF DIGITAL HUMANITIES AND UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

10. लोक सर्वलोकाट्टा, अष्टाध्यायी, पाणिनी, 5/1/44

11. स इमांल्लोकान सृजत। अम्मौमरीचीर्मरमापोऽदोउभ्यः परेण दिवं द्यौ

प्रतिष्ठान्तरिधं मरीचयः पृथिवीः मरो या अधस्तात्वताआपः -ऐतरेयोपनिषद, 1/1/2

12. महाभारत (आदिपर्व), वेदव्यास, 1/84

13. गीता, 3/20

14. लोक-गीतों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि (भोजपुरी और अवधी के सन्दर्भ), डॉ0 विद्या चौहान,

पृष्ठ-40

15. सन्त साहित्य की लौकिक पृष्ठभूमि, डॉ0 ओमप्रकाश शर्मा, पृष्ठ-1 से 8 तक

16. कबीर ग्रन्थावली- पृ0 39/20।

17. हिन्दी कविता में लोक-संस्कृति, डॉ0 सर्वेश कुलश्रेष्ठ, पृष्ठ-2

18. 'जनपद', वर्ष-1, अंक-1, डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ-65

19. लोक-साहित्य बनाम नागर साहित्य, (ज्ञान-शिखा, तुलनात्मक भारतीय साहित्य विशेषांक),

डॉ0 जितेन्द्र नाथ पाण्डेय, पृष्ठ-72

20. पीज़ेन्ट सोसाइटी एण्ड कल्चर- रॉबर्ट रेडफील्ट, पृष्ठ 65, 1956

स्त्रोत- लोक साहित्य का अध्ययन, त्रिलोचन पाण्डेय

21. लोक साहित्य विज्ञान, डॉ0 सत्येन्द्र, पृ0-3

विस्तृत जानकारी के लिए देखिए- लोक साहित्य का अध्ययन, त्रिलोचन पाण्डेय, पृष्ठ-100 से 109 तक।

22. फोकलोर मनथली- सितम्बर 1974, टवसण् 16, पृष्ठ-299

Peer Reviewed Online Journal in English

www.ijdus.org

INTERDISCIPLINARY JOURNAL
OF
DIGITAL HUMANITIES
AND
UBIQUITOUS SCHOLARSHIP

IJDUS

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

23. लोक साहित्य बनाम नागर साहित्य (ज्ञान-शिखा, तुलनात्मक भारतीय साहित्य विशेषांक), डॉ0 जितेन्द्र नाथ पाण्डेय, पृष्ठ-73

24. समाज पत्रिका (काशी विद्यापीठ) वर्ष 4, अंक 3 (1958), पृष्ठ-446

25. लोक साहित्य का अध्ययन, त्रिलोचन पाण्डेय, पृष्ठ-105

26. लोक-संस्कृति की रूपरेखा, डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ 12-13

27. यदि वाचं प्रदास्यामि, द्विजातिरिव संस्कृताम्।
रावणं मन्यमानामां, सीता भीता भविष्यति।

- वाल्मीकीय रामायण- सुन्दरकाण्ड

28. लोक-संस्कृति की रूपरेखा, डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ-14

29. मेघदूत (पूर्व), कालिदास, श्लोक-16

30. इक्षुच्छाया निणादिन्यः,
तस्य गोप्तुर्गुणोदयम्।
आकुमार कथोद्घातं
शालिगोप्यो जगुर्यशः।।

-रघुवंश, कालिदास, सर्ग 4, श्लोक-20

31. द्विधा विभक्तेन च वा.मयेन,
सरस्वती तन्मिथुनं नु नाव।
संस्कार पूतेन गिरा वरेण्यं,

Volume II Issue II July- December 2023 ISSN: ISSN: 3048-9113 (Online)

वधूं सुख ग्राह्य निबन्धनेन।।

-कुमार-सम्भव, कालिदास, 7/90

32. हिन्दी-साहित्य का वृहत् इतिहास, षोडश भाग, पृष्ठ-12

33. ब्रजलोक-साहित्य का अध्ययन (विषय-प्रवेश), डॉ0 सत्येन्द्र, पृष्ठ-2

34. लोक-संस्कृति की रूपरेखा, डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय, पृष्ठ-16

35. लोक-संस्कृति विशेषांक (सम्मेलन-पत्रिका) श्री रामनाथ सुमन, पृष्ठ-9

36. हिन्दी कविता में लोक-संस्कृति, डॉ0 सर्वेश कुलश्रेष्ठ, पृष्ठ-4

37. हमारी जीवंत संस्कृति, डॉ0 रामानन्द तिवारी, पृष्ठ-18

38. हरयानवी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, डॉ0 गुणपाल सांगवान, पृष्ठ-38

39. तुलसीकाव्य का सांस्कृतिक अध्ययन- डॉ0 जितेन्द्र नाथ पाण्डेय, पृ0-23